पाखी

प्रेमचन्द साहित्य संस्थान का त्रैमासिक

अंक : 31
मास : सितम्बर 2020

ISSN : 2231-5187

पाखी

प्रेमचन्द साहित्य संस्थान का त्रैमासिक

संस्थापक : केदारनाथ सिंह

सम्पादक : सदानन्द शाही

www.saakhee.com
www.notnul.com पर सभी अंक उपलब्ध

संस्थापक : केदारनाथ सिंह

सम्पादक मण्डल : पी. एन. सिंह/अवधेश प्रधान/रघुवंश मणि/सन्ध्या सिंह
सम्पादक : सदानन्द शाही
सहायक सम्पादक : डॉली मेघनानी

प्रतिनिधि : भानुप्रताप सिंह, मो. 8299206277 **(गोरखपुर)**
बृजराज कुमार सिंह, मो. 9838709090 **(आगरा)**
अजीत कुमार सिंह, मो. 9454351608 **(इलाहाबाद)**
निरंजन कुमार यादव, मो. 8726374017 **(गाजीपुर)**
अमित कुमार सिंह, मो. 9407655400 **(बिलासपुर)**
विशाल विक्रम सिंह, मो. 9461672755 **(जयपुर)**
राकेश कुमार रंजन, मो. 9450938895 **(गया)**

आवरण चित्र : मृदुला सिन्हा

सज्जा : राहुल शा

प्रसार : विश्वमौलि, मो. 9450209580
इन्दुशेखर त्रिपाठी, मो. 7376831000

अक्षर संयोजन : श्री काशी विश्वनाथ कम्प्यूटर, वाराणसी

मुद्रक : मित्तल आफसेट, वाराणसी

मूल्य :

यह अंक	:	**अस्सी रुपये मात्र**
सदस्यता	:	**तीन सौ रुपये मात्र (चार अंकों के लिये) आजीवन (दस वर्ष के लिये) तीन हजार रुपये मात्र**
संस्थाओं के लिए	:	**पाँच सौ रुपये मात्र (चार अंकों के लिये) आजीवन (दस वर्ष के लिये) पाँच हजार रुपये मात्र**
विदेश के लिए	:	**चालीस डॉलर मात्र (चार अंकों के लिये) आजीवन (दस अंकों के लिये) पाँच सौ डालर मात्र**

कृपया भुगतान 'साखी' के नाम डिमांड ड्राफ्ट /चेक/धनादेश से सम्पादकीय पते पर भेजें। बाहर के चेक में 15 रुपये अतिरिक्त जोड़ें अथवा साखी के खाता संख्या-**19270100012904** RTGS/NEFT IFSC Code **BARBOLANKAX** बैंक ऑफ बड़ौदा, लंका-वाराणसी में जमा करें।

सम्पादकीय सम्पर्क
क
बी-2, सत्येन्द्र कुमार गुप्त नगर
लंका, वाराणसी-221005, उ.प्र.
दूरभाष/फैक्स : 0542-2366771
मोबाइल : 09450091420, 9616393771

ईमेल
saakhee2000@gmail.com
sadanandshahi@gmail.com
editor@saakhee.com
वेबसाइट
www.saakhee.com

(मनोज कुमार सिंह, सचिव-प्रेमचन्द साहित्य संस्थान, प्रेमचन्द पार्क, बेतियाहाता, गोरखपुर, उ.प्र. से प्रकाशित)

इस अंक में

सम्पादकीय

कोरोना समय में हिन्द स्वराज्य — सदानन्द शाही — 5

आलेख

साहित्य हमें क्या देता है — पी. एन. सिंह — 9

उत्तर औपनिवेशिक विमर्श और भारत — हरीश त्रिवेदी **अनु.** अवनीश राय — 15

भारतीयता की अवधारणा और दलित साहित्य — जयप्रकाश कर्दम — 32

आपदा में साहित्य

परिचर्चा : कोविड-19 से उत्पन्न चुनौतियाँ और साहित्य
पीटर फ्रिडलैंडर / शंभुनाथ / अवधेश प्रधान / आलेक्सान्द्रा कोंसोलारो /
मनीषा कुलश्रेष्ठ / सदानन्द शाही, संयोजन : संध्या सिंह, प्रस्तुति : डॉली मेघनानी — 40

महामारी में मनुष्य

शंभुनाथ की कविताएँ — 46

अमेरिका में अश्वेत आक्रोश पर दो कविताएँ

मैं सांस नहीं ले पा रहा हूँ — मदन कश्यप — 54

मैं स्वीकार करता हूँ — राजेश मल्ल — 55

कहानी

यादों की गिलहरियाँ भी न — रोहिणी अग्रवाल — 57

दस कविताएँ — पंकज चतुर्वेदी — 78
पाँच कविताएँ — सुभाष राय — 87
तीन कविताएँ — देवेश पथसरिया — 94

प्रेमचंद नामा
प्रेमचन्द और गांधी — अली अहमद फातमी — 99

उड़िया कविता
अंजुमन आरा की कविताएँ — 110

देशांतर : लातिनी अमेरिकी कविता
घोषणापत्र / निकानोर पार्रा — **अनु.** उज्ज्वल भट्टाचार्य — 113

अफ्रीकी कविता
अब्दुर्रहमान बावेरी की कविताएँ — **अनु.** मधु सिंह — 118

स्मृति लेख : कृष्ण बलदेव वैद / गंगा प्रसाद विमल / गिरिराज किशोर
उपसंहारों से आगे — शशिभूषण द्विवेदी — 126

परिसर से
पाँच कविताएँ — पूजा यादव — 136

जनपदीय
उपन्यास से बेसी : गंगा रतन विदेशी — प्रकाश उदय — 141

समीक्षाएँ
वह मेरी परिचित है (देह ही देश-गरिमा श्रीवास्तव) — अलका सरावगी — 160
मीराबाई का समाज (पच रंग चोला पहर सखी री-माधव हाड़ा) — आशीष मिश्र — 164
अतीत की राख से निकाल कर (मल्लिका-मनीषा कुलश्रेष्ठ) — शुभा राव — 169
धुएं और धुंध से परे स्त्री जीवन (हसीनाबाद-गीताश्री) — शहंशाह आलम — 173
चिंता से रची गयी कविताएँ (पनसोखा है इंद्र धनुष-मदन कश्यप) — कमलेश वर्मा — 176
अपनी ही साँसों की आवाज (जीवन हो तुम-निशान्त) — अनूप श्री विजयिनी — 180
किसान आंदोलनों की बेहतर समझ के लिए
(नील की खेती और अंग्रेजी राज-प्रभात कुमार शुक्ल) — अनुराधा सिंह — 188

सम्पादकीय

कोरोना समय में हिन्द स्वराज

आज दुनिया कोविड-19 वायरस से उत्पन्न खतरे से जूझ रही है। चारों तरफ मृत्यु का तांडव है। अज्ञात-सा भय है। तालाबंदी में करोड़ों लोग घरों में कैद रहने को मजबूर हैं। करोड़ों लोगों की रोजी-रोटी छिन गई है, करोड़ों के आशियाने उजड़ गए हैं, करोड़ों लोग घर से बेघर हुए हैं। यह दुनिया के विपन्न ही नहीं; संपन्न और शक्तिमान देशों का भी हाल है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद दुनिया संभवतः पहली बार ऐसे संकट से गुजर रही है। हालांकि द्वितीय विश्व युद्ध के संकट से कोरोना समय की तुलना करना जल्दबाजी लग सकती है; लेकिन हवाई वाहनों से रहित आकाश और रेलगाड़ियों से खाली रेल की पटरियाँ, कोलतार से बनी सड़कों का खाली पड़ा विशाल संजाल द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर महासन्नाटे की गवाही देने के लिए पर्याप्त हैं। विश्व की सबसे ताकतवर कुर्सियाँ जो कल तक इस सारे प्रकरण को प्रतिपक्ष द्वारा खड़ा किए गए हौवे के रूप में देख रही थीं आज उन्हें भी सांप सूंघ गया है। इस भकुआयेपन में वे कभी किसी शत्रु या प्रतिद्वंद्वी देश को, तो कभी गैर धर्म को जिम्मेदार ठहराते हुए अपनी कमजोरियाँ छुपा रही हैं। तालाबंदी और वैश्विक मंदी की आशंकाओं के बीच अनिश्चितता के जो बादल घिर आए हैं, दूर-दूर तक उनके छटने के आसार नहीं दिखाई दे रहे हैं।

यह संकट अभूतपूर्व तो है पर आकस्मिक नहीं है। हम क्रमशः इस ओर कदम बढ़ाते चले जा रहे थे। प्रकृति विज्ञानी, पर्यावरणविद और ऐसे ही अनेकानेक विशेषज्ञ न जाने कबसे चेताते आ रहे हैं, लेकिन हमें ज्ञान और विज्ञान की बात सुनने का अभ्यास नहीं है। हमें केवल फायदे की आवाजें सुनाई देती हैं। कोविड 19 का ही उदाहरण लें तो इसे लेकर वैज्ञानिकों ने 2019 के अंत से ही चेतावनी देनी शुरू कर दी थी। लेकिन दुनिया मुनाफे और आगामी चुनाव की चिंता में मुब्तिला थी। जब खतरे ने महामारी का रूप धारण कर लिया और लोग पट पटा कर मरने लगे तब समझ में आया कि अरे यह तो महामारी है। और फिर अचानक आई आँधी में घिरे आदमी की तरह इधर-उधर भागने लगे। हमारी हालत पलिहर (ऐसी जगह जहाँ पेड़ न हों) के बंदर जैसी हो

गयी। कुछ सूझ ही नहीं रहा कि—क्या करें?

हमारी आधुनिक दुनिया को फायदे के अलावा और कोई तर्क न तो सुनाई पड़ता है और न ही सुझाई पड़ता है। ऐसे ही लोगों के लिए कभी फिराक गोरखपुरी ने लिखा था— *'पूछते हैं वो इश्क से क्या फायदा/पूछता हूँ मैं फायदे से क्या फायदा?'* हम एक रौ में चलते रहते हैं जैसे कि नींद में चल रहे हों। एक ठोकर लगती है और सहसा नींद खुल जाती है और हम जग जाते हैं। कोविड 19 भी ऐसी ही ठोकर की तरह है। लेकिन आज हमें अपने आप से यह प्रश्न पूछना चाहिए कि क्या कोविड 19 हमारी नींद खोलने वाला है? क्या यह हमारी सुदीर्घ कुंभकरणी नींद को तोड़ने वाला है? लेकिन लाख टके का सवाल यह है कि क्या अभी तक हम नींद में थे, क्या यह हमें मालूम था?

हिंद स्वराज का एक वाक्य याद आता है—'नींद में आदमी जो सपना देखता है उसे वह सही मानता है जब उसकी नींद खुलती है तभी उसे अपनी गलती मालूम होती है।' गांधी के पहले, खासतौर से हमारे भक्त कवियों ने, इसे बार-बार कहा है और बहुत काव्यात्मक ढंग से कहा है। लेकिन भक्त कवियों से अलग गांधी यह बात आधुनिक दुनिया का आलोचनात्मक पाठ प्रस्तुत करते हुए कहते हैं।

गांधी आगे कहते हैं कि 'इंसान नींद में से उठता है तो अंगड़ाई लेता है, इधर-उधर घूमता है और अशांत रहता है, उसे पूरा भान आने में वक्त लगता है'। इस झटके से हमारी नींद या बेहोशी में खलल जरूर पड़ी है, मन भी अशांत है पर अब भी हम नींद से बाहर आए हैं या नहीं? क्योंकि जैसे-जैसे कोविड 19 का भयावह प्रभाव विस्तार होता गया है, हम इसके अभ्यस्त भी होते जा रहे हैं। मुनाफा या फायदे की दुनिया की गिरफ्त में हम बने हुए हैं। 'दिल मांगे मोर' ही समय का सत्य बना हुआ है।

इसी उधेड़बुन में मैंने दोबारा गांधी का हिंद स्वराज पढ़ा। पहली बार हिन्द स्वराज पढ़ते हुए मन में कई तरह की हिचकिचाहट थी। जिस आधुनिक दुनिया में हम जी रहे हैं या जिसमें जीने का अभ्यास हो गया है, हिंद स्वराज उसकी बुनियादी आलोचना करता है। गांधी केवल आलोचना कर के नहीं रह जाते। वे आधुनिक दुनिया की बहुतेरी चीजों को अभिशाप तक करार देते हैं। वे इस सभ्यता की तुलना क्षय रोग से करते हुए कहते हैं—'क्षय का रोग बाहर की हानि नहीं पहुंचाता और वह रोग बाहर दिखाई देने वाली हानि नहीं पहुंचाता और वह रोग आदमी को झूठी लाली देता है। इससे बीमार विश्वास में बहता रहता है और आखिर डूब जाता है। सभ्यता का भी ऐसा ही समझिए। वह एक अदृश्य रोग है।' आधुनिक सभ्यता की विशेष निर्मितियों—रेल, वकील और डॉक्टर तक को वे हिंदुस्तान की कंगाली का कारण मानते हैं। वे यह भी कहते हैं कि 'अंग्रेजों ने अदालतों के जरिए हम पर अंकुश लगाया'। वे लिखते हैं 'जिसे आप पार्लियामेंटों की माता कहते हैं, वह पार्लियामेंट तो बांझ और वेश्या है'।..... 'बड़े-बड़े सवालों पर जब पार्लियामेंट में चर्चा चलती है तब उसके मेम्बर पैर फैलाकर लेटते हैं या बैठे-बैठे झपकियाँ लेते हैं। उस पार्लियामेंट के मेम्बर इतने ज़ोरों से चिल्लाते हैं कि सुनने वाले हैरान परेशान हो जाते हैं'.... मेम्बर जिस पक्ष के हों उस पक्ष के लिए अपना मत वे बगैर सोचे-विचारे देते हैं'.... 'ब्रिटिश पार्लियामेंट महज प्रजा का खिलौना है और यह खिलौना प्रजा को भारी खर्च में डालता है'। आज मुनाफे की व्यवस्था की सभी निर्मितियों का वीभत्स रूप दिखाई पड़ रहा है।

थोड़े दिन पहले गांधी की इस बुनियादी आलोचना को सुनने तक के लिए हम तैयार नहीं थे। इस दुनिया की कुछ चीजों के प्रति इस कदर मोह हो गया है कि लगता है जैसे उसके बगैर दुनिया संभव ही नहीं है। गांधी कहते हैं कि 'जब तक आदमी अपनी चालू हालत से खुश रहता है तब तक उसमें से निकलने के लिए उसे समझाना मुश्किल है। ....चालू चीज से ऊब जाने पर ही उसे फेंक देने को मन करता है'। यह चालू चीज क्या है? गांधी की नज़र में यह चालू चीज आजकल की सभ्यता है। गांधी ने आजकल की सभ्यता की एक-एक चीज की आलोचना की है। गांधी का आदर करते हुए भी आज से पहले गांधी की आलोचना नहीं समझ में आती। क्या आज से पहले हम यह सोच सकते थे कि ट्रेन के बगैर हमारा जीवन संभव है! हिंद स्वराज में ट्रेन के बारे में गांधी जो कहते हैं, उसको हम आज के पहले वैसे ही नहीं ग्रहण कर सकते थे जैसे कि आज ग्रहण कर पा रहे हैं। गांधी ने ट्रेन की आलोचना करते हुए लिखा है—'रेल से महामारी फैलती है। अगर रेलगाड़ी ना हो तो कुछ ही लोग एक जगह से दूसरी जगह जाएंगे और इस कारण संक्रामक रोग सारे देश में नहीं पहुँच पाएंगे। पहले हम कुदरती तौर पर ही सेग्रेगेशन-सूतक-पालते थे। रेल से अकाल बढ़े हैं, क्योंकि रेलगाड़ी की सुविधा के कारण लोग अपना अनाज बेच डालते हैं। जहाँ महंगाई हो वहाँ अनाज खिंच जाता है, लोग लापरवाह बनते हैं और उससे अकाल का दुख बढ़ता है। रेल से दुष्टता बढ़ती है। बुरे लोग अपनी बुराई तेजी से फैला सकते हैं। हिंदुस्तान में जो पवित्र स्थान थे, वे अपवित्र बन गए हैं। पहले लोग बड़ी मुसीबत से वहाँ जाते थे। ऐसे लोग वहाँ सच्ची भावना से ईश्वर को भजने जाते थे; अब तो ठगों की टोली सिर्फ ठगने के लिए वहाँ जाती है'। यह सिर्फ रेलगाड़ी की आलोचना नहीं है। रेलगाड़ी सिर्फ प्रतीक है। यह आज की सभ्यता की आलोचना है। आज की सभ्यता को गांधी बहुत संक्षेप में परिभाषित करते हैं—'शरीर का सुख कैसे मिले यही आज की सभ्यता ढूंढती है; और यही देने की कोशिश करती है। परंतु वह सुख भी नहीं मिल पाता'। गांधी आज की सभ्यता के रूप में उस रोग की पहचान करते हैं जिससे भारत और योरप दोनों पामाल हैं। गांधी दोनों के ही दुखों के मूल में आज की सभ्यता को देखते हैं।

गांधी ने हिन्द स्वराज में इसी सभ्यता को परत-दर-परत उजागर किया है। योरप के ज्ञान विज्ञान और पुरुषार्थ के मूल में 'शरीर सुख की खोज में धन्यता' का भाव है। इस सारे उद्यम के मूल में गांधी अकर्मण्यता को पाते हैं। सारी खोज इस बात के लिए कि 'आदमी को हाथ पांव हिलाने की जरूरत नहीं रहेगी'। हिंद स्वराज शीर्षक सुनकर लगता है जैसे इस किताब में गांधी भारत को आजादी कैसे मिले जैसे विषय पर बात कर रहे हैं लेकिन किताब पढ़ने पर लगता है कि नहीं, गांधी इससे आगे की बात कर रहे हैं। दरअसल गांधी के सरोकार केवल भारत की आज़ादी नहीं बल्कि मनुष्यमात्र की आजादी से है। हिंद स्वराज में गांधी ने अफ्रीका के मरहूम प्रेसिडेंट पाल क्रूगर का एक प्रसंग बताया है। पाल क्रूगर से पूछा गया था कि चाँद में सोना है या नहीं। उसने जवाब दिया चाँद में सोना होने की संभावना नहीं है क्योंकि सोना होता तो अंग्रेज अपने राज्य के साथ उसे जोड़ लेते। पैसा उनका (अंग्रेजों का) खुदा है। इस प्रसंग से गांधी यह बताना चाहते हैं कि आज की सभ्यता का मूल मंत्र है—पैसा। पैसा उनका खुदा है। पैसे की तलाश में यह सभ्यता इस कदर मुब्तिला हुई कि उसने प्रेम और मनुष्यता को भुला दिया। आदमी लोभ के चरम पर पहुँचा। वह धरती के गर्भ से सारी सम्पदा आज ही निकाल लेने पर तुल गया। उसने ऐसे विनाशक हथियार